Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

राजेश जोशी की कविता में समाज–समीक्षा और संघर्ष–चेतना : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. विशाल श्रीवास्तव
असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय, पचवस, बस्ती,
उत्तर प्रदेश, भारत।

शोध–सार–राजेश जोशी के कविता लोक में गृहस्थी, प्रेम, रोजमर्रा के जीवन और सम्बन्धों पर लिखी गयी तमाम कविताएँ भी हैं, जो अपने कलेवर और बयान में बेहद कोमल हैं। उनकी भाषा अपने विशिष्ट तेवर के बावजूद अत्यंत साधारण शब्दों से बुनी हुई है, वह सड़क पर चल रहे आम आदमी की भाषा है। भारतीय शास्त्र एवं परम्परा से परिचित और बहुपठ होने के बावजूद राजेश जोशी अपनी भाषा में बेवजह की तत्समता से न केवल बचते हैं बल्कि उनकी भाषा का मिजाज़ ख़ालिस 'हिन्दुस्तानी' का है। यही वजह है कि वे बेहद आमफहम भाषा में अपनी बात को पाठक तक सम्प्रेषित कर पाने में सम्भव हुए हैं।
कूट–शब्द : राजेश जोशी, कविता, समाज–समीक्षा, संघर्ष–चेतना, सौन्दर्य, सम्बन्ध, भारतीय, शास्त्र।

राजेश जोशी के लिए कविता लिखना एक सायास कर्म नहीं है, बल्कि कविता ही उनकी शरणस्थली है, कविता रचे बिना व अपने होने की कल्पना नहीं कर सकते। यही कारण है कि उनकी कविताएँ किसी शिल्पविशेष का सहारा लेकर बुनी हुई कविताएँ न होकर अपनी सहजता में अभिव्यक्त होते यथार्थ के आयामों की जीवन्त छवियाँ हैं। राजनीति, विचार, सहज जीवन, आत्मिक सम्बन्ध और सौन्दर्य को अपने विस्तार में आच्छादित करती उनकी कविताएँ हमारे समय को सम्पूर्णता में व्याख्यायित करने में पूरी तरह सक्षम दिखती हैं।

उनके काव्य–संसार में प्रवेश करते ही स्पष्ट दिखाता है कि जीवन की त्रासदियों की जगह टुकड़ों में बँटी उसकी चमक को देखने का काम एक कवि के रूप में राजेश जोशी बखूबी करते हैं, तमाम साधारण चीज़ों के बीच जीवन का यह सौंदर्य तलाशना मनुष्य की उत्कट जिजीविषा के इतिहास को स्वीकृति देना है। 'जन्म' शीर्षक कविता जो संग्रह 'नेपथ्य में हँसी' में संकलित है, बंजारों के कठिन जीवन को देखते हुए उनकी 'सम्पत्ति' में मौजूद साधारण चीज़ों की विशिष्टता को उद्घाटित करती है। साधारणता के सौंदर्य की ओर कवि का यह आकर्षण उदारीकरण और बाज़ार की चमक के प्रति लोक का परिश्रमसमृद्ध और सुंदर प्रतिसंसार रचने का प्रयास है। तीव्रता से परिवर्तित होती दुनिया में एक कवि अपनी कलात्मक ज़िम्मेदारी का निर्वहन करता हुआ दिखाई देता है, वह बाज़ार के आतंक को भले प्रभावित न कर सके, लेकिन उसके बरअक़्स वह अपनी कला के माध्यम से सहजता के साधारण सौंदर्य को रूपायित कर सकता है, काम्य बना सकता है। इस कविता में कवि कहता है,

SHISRRJ192329 | Received : 01 March 2019 | Accepted : 20 March 2019 | March-April 2019 [2 (2) : 280-285]

कितनी अनमोल, कितनी अद्वितीय होती हैं वे साधारण चीज़ें
जिनके सहारे चलता है यह महाजीवन
वो छोटी सी काली हंडिया जिसमें पकाई जाती है दाल
और रख ली जाती हैं जीवन की छोटी छोटी खुशियाँ
पुराने अख़बार का वो कोई छोटा सा टुकड़ा
जिसमें बाँधकर रखा जाता है नमक
इतने सहेजकर रखती है वह बंजारन औरत नमक को
क़ाग़ज में बाँध लिया हो जैसे उसने पूरा अरब सागर।

पुराने अख़बार के टुकड़े में नमक सहेजने के बहाने पूरे अरब सागर को बाँध लेने का जो यह बिम्ब है, वह अपूर्व है। हमारे समूचे जीवन में नमक अरसे से एक बड़े प्रतीक के रूप में उपस्थित रहा है। आज हर छोटी बड़ी दुकान पर थैलियों में नमक उपलब्ध होने से भी उसका मूल्य, उसकी गरिमा कम नहीं होती है, हमारे इतिहास में नमक की स्थायी जगह है, गांधी द्वारा नमक के लिए किया गया आंदोलन उसकी अर्थवत्ता को सुपारिभाषित करता है। इस सिलसिले में 'नमक' शीर्षक से कवि की एक अन्य कविता को भी याद किया जाना चाहिए, जिसमें वे आज़ादी की लड़ाई में नमक और भाषा को सम्बद्ध करते हुए कहते हैं :

समुद्र से मुझे निथारकर लाने की प्रक्रिया से
शुरू हुई आजादी की लड़ाई
और लोगों ने एक नई भाषा को ईजाद किया
चाहो तो माना जा सकता है उसे
हिन्दी गद्य का जन्मदिन भी
साँवली कही जाने वाली जिस महाजाति का जीवन–संग्राम
लिखा है हिन्दी के गद्य ने

'जन्म' कविता में भी बंजारन औरत द्वारा नमक को बांधने के बहाने कवि मनुष्य द्वारा अटूट जीवनशक्ति पर नियंत्रण का रूपक रचित करता है। इस उदाहरण से यह विश्वास मजबूत होता है कि कला अंततः जीवन के फीकेपन में इस नमक को बचाने की कोशिश है, जिसका बखूबी अभ्यास राजेश जोशी की कविता भी करती है।

राजेश जोशी शहरी जीवन के ऐसे पर्यवेक्षक हैं, जिसे शहर और जीवन से असीमित प्रेम है। उनकी तमाम कविताएँ ऐसी हैं, जिनमें वे शहर के विभिन्न हिस्सों में दृश्यों, याकि सिनेमाई भाषा में कहें तो फ्रेम्स को भाषा में रूपांतरित करते हैं। इस रूपांतरण में वे अपनी संवेदना और करुणा को समूचे दृश्य पर किसी छाया की तरह सम्मिलित करते हैं, उनका कौशल यह है कि यह सम्मिलन कभी भी सायास नहीं लगता। वे अपने साथ पाठक को उस फ्रेम में आहिस्ते से ले जाते हैं, जैसे कोई अपने मित्र के कांधे पर हाथ रखकर ले जा रहा हो, यह कहते हुए कि ज़रा इसे देखो, ज़रा इसे महसूस करो। कुछ इन्हीं कारणों से राजेश जोशी की कविता में यह करुणा कभी अपने सान्द्रतम रूप में उपस्थित नहीं होती बल्कि प्रायः तो एक 'विट' दिखता है, जिसके बारे में शायद यह कहा जा सकता है कि वह कुछ न कर पाने की लाचारगी से उपजी एक निरर्थक हँसी का संकोच मात्र हो। यही कारण है कि उनकी इस तरह की कविताओं में एक निरपेक्ष काव्यात्मक सहानुभूति को लक्षित किया जा सकता है, जो पाठक को किसी सकारात्मक दिलासा देने का

अभिनय नहीं करती। वे एक कवि के रूप में उस असुविधाजनक यथार्थ को हमारे समक्ष रख देना चाहते हैं, फिर चाहे वह हमें कितना भी विचलित करे। 'प्लेटफार्म पर', 'थोड़ी सी जगह', 'घोंसला' कुछ ऐसे ही दृश्यों पर केन्द्रित कविताएँ हैं। राजेश जोशी की सर्वाधिक उद्धरित की जाने वाली उनकी लोकप्रिय कविताओं में से एक 'बच्चे काम पर जा रहे हैं' भी इसी श्रेणी की कविता है, यह भी हर मंझोले दर्ज़े के शहर की सुबह में अक्सर दिख जाने वाले एक दृश्य पर आधारित है। इस कविता को ध्यान से पढ़ें तो कविता में किसी बड़े संघर्ष की प्रस्तावना या आकांक्षा पर विचार नहीं किया गया है बल्कि एक दृश्य को किसी प्रश्न की तरह हमारे बीच उछाल दिया गया है :

बच्चे काम पर जा रहे हैं
हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति है यह
भयानक है इसे किसी विवरण की तरह लिखा जाना
लिखा जाना चाहिए इसे सवाल की तरह
काम पर क्यों जा रहे हैं बच्चे?

यह कविता सीधे प्रश्न पूछती है कि क्या सारी गेंदें, किताबें, खिलौने खो गये हैं या मदरसे और घरों के आँगन नष्ट हो गये हैं? यह होना भयानक है लेकिन अगर यह सब होते हुए भी छोटे बच्चे काम पर जा रहे हैं, तो यह उससे भी भयानक है। कवि यहाँ समाज के दोनों कंधों को हिलाकर झकझोर देना चाहता है। यहाँ कोई आशावाद नहीं है, एक गहरी निराशा है, बेबसी है, चिंता है और यह सब संगुम्फित होकर अपने वृहत्तर आयामों में करुणा में रूपांतरित हो रहे हैं। कविता की सफलता इस करुणा के साधारणीकरण में है। हिन्दी कविता में 'श्रम' को केन्द्र में रखकर बहुत सारी कविताएँ लिखी गयी है, किसानों–मज़दूरों पर प्रगतिवाद और नयी कविता के दौर में इस तरह की सैकड़ों कविताएँ मिलती हैं। इस कविता की विशेषता दृश्य में मौजूद करुणा को पाठक तक शत–प्रतिशत सम्प्रेषित कर पाना है, यह मेरी जानकारी में स्त्री–श्रम पर केन्द्रित पहली हिन्दी–कविता 'वह तोड़ती पत्थर' में भी सम्भव हुआ है, वहाँ भी जो विरोधाभास दृश्यांकित हुआ है वह दृश्य की करुणा का सार्थक प्रतिफलन सम्भव बनाता है। श्रम और बच्चों पर केन्द्रित एक और कविता राजेश जोशी के पास है, जो उनके पहले ही काव्यसंग्रह 'एक दिन बोलेंगे पेड़' में संकलित है। इस कविता में कवि जब लेबर कॉलोनी के बच्चों को 'दैनिक अख़बार की तरह तरोताज़ा' और 'किसी खोयी हुई चाबी के गुच्छे–से वे बच्चे' कहते हैं, तो वे श्रमिक जीवन में बच्चों की उपस्थिति की विडम्बना को हम तक पहुँचा रहे होते हैं। 'बच्चों की चित्रकला प्रतियोगिता' शीर्षक कविता में भी चित्र बनाते हुए बच्चे चित्र में इस बदलती हुई दुनिया में मौजूद बहुत सारी चीज़ों को अंकित करते हैं, इतना कि एक गेंद बनाने की जगह चित्र में नहीं बचती, यह हमारे इस विकसित संसार का अत्यंत तीखा किन्तु स्याह बिम्ब है जो कवि प्रस्तुत करता है। राजेश जोशी की एक कविता 'उनका भरोसा', जो भीख माँगने वाले बच्चों के बारे में है, उसपर भी इसी सिलसिले में बात कर लेना उचित होगा। इस कविता में भीख माँगने वाले बच्चों को अपने काम के प्रति अभ्यस्त हो जाना और स्वाँग में सम्मिलित हो जाना एक भयावह यथार्थ के रूप में मौजूद है। समय ने इन छोटे–छोटे बच्चों को अपने जीवन की दीनता और विडम्बना के प्रति उदासीन बना दिया है, जिसे कवि ठीक से पहचानता भी है और अभिव्यक्त भी करता है :

अपने छोटे–छोटे हाथ फैलाते हैं
गिड़गिड़ाते हैं पेट दिखाते हुए कहते हैं वे कई दिन से भूखे हैं
तुम्हें दयार्द्र कर डालने का लगभग हर हथकंडा अपनाते हैं
कैसी भयावह उदासीनता में फेंक दिया है हमने उन्हें

कितना तिक्त है उनका अहसास हमारे समाज के लिए
जिसमें उनका भी एक कोना है, इसी की
परिधि के आसपास

राजेश जोशी के कवि के यहाँ इस नारकीय दुनिया में बच्चों की स्थिति को लेकर गहरी विकलता है, वे परत–दर–परत इन समस्याओं को लेकर चिंतित दिखते हैं, जिसकी गवाही उनके काव्य–संसार में उपस्थिति इन दृश्यों में मिलती है। इसी कविता का विस्तार 'नसरगट्टे' शीर्षक कविता में भी दिखता है, जहाँ ये बच्चे बालश्रम की गली से गुज़रते हुए अपराध की दुनिया में प्रवेश कर जाते हैं। आस–पास के ढाबों और दुकानों में काम करते ये बच्चे अपनी उम्र से बहुत अधिक परिपक्व हो जाते हैं, किन्तु उनकी इस परिपक्वता के बीच कहीं उनके बचपन की झलक भी मौजूद है, जो यदा–कदा उनकी शैतानियों में चमक की तरह दिखती है। एक कवि के रूप में इन गहरे दृश्यों के अतिरिक्त राजेश जोशी शहरी समाज में काम करते हुए उन लोगों पर भी दृष्टि रखते हैं, जो प्रायः निरंतर उपस्थित रहते हुए भी ओझल रहते हैं। 'नट', 'मसखरे' और 'उस प्लम्बर का नाम क्या है' आदि कुछ ऐसी कविताएँ हैं, जो समाज के नेपथ्य में रहने वाले लोगों के जीवन के बारे में हैं। हिन्दी कविता में इस 'अन्य' की उपस्थिति को सम्भव बनाने में राजेश जोशी जैसे कवियों का महत्वपूर्ण योगदान है। तेज़ी से विकसित होते आधुनिक समाज में गाँवों और छोटे शहरों से विस्थापित होकर बड़े शहरों में बसते हुए मनुष्यों का जीवन चमचमाते शहरों के बीच उपस्थित एक अनूठा 'पाताल लोक' है। 'नट' कविता में शहर में खेल दिखाने आये नट के छीजते जीवन का प्रतीक उसके दीमक खाये बाँस और जर्जर हो चुकी रस्सी है। कविता के माध्यम से कवि हमारे जीवन में लोककलाओं की कम होती जगह और उनके विलुप्तप्राय होते जाने की कथा कहता है लेकिन साथ ही एक नट के माध्यम से संसार को देखने की दृष्टि का अनुभव भी पाठक को कराता है। सुविधाभोगी, सुकुमार शहरी कवि को नट के बहाने से जीवन के प्रति अदम्य आकर्षण और एक दुर्निवार जिजीविषा की पहचान होती है :

नट!
क्या कभी डर नहीं लगता तुम्हें?
आशंका से कभी काँपते नहीं तुम्हारे पाँव?

यहाँ फिर एक बार सवाल उठता है कि अस्सी के दशक में लिखी इस कविता में नट का जो भरोसा था, वह आज कितना डिग गया होगा। इस कविता का नट आज कहाँ होगा, सड़कों के किनारे तमाशा दिखाते नट यदि हमारे रोज़मर्रा के दृश्य का हिस्सा नहीं हैं, तो वे क्या कर रहे हैं, कहाँ हैं वे। आधुनिकता और नगरीकरण के प्रति हमारे मोह से विकसित होती स्मार्टसिटीज़ में इन नटों की क्या जगह है? प्रश्न यह भी उठता है कि यदि हमने उन्हें अपनी सभ्यता से निर्वासित कर दिया है, तो वे क्या कर रहे हैं। इन दोनों प्रश्नों से भी अधिक महत्वपूर्ण है कि उनके बारे में हमारी कविता या कलाएँ क्या कह रही हैं, क्या वे वहाँ से भी विस्थापित हो गये हैं। समय और समाज के बहुत बड़े ललित प्रश्नों से जूझती हुई कला और कविता के पास इन व्यक्तियों के बारे में क्या जानकारी है? ये सभी प्रश्न राजेश जोशी की कविता की प्रासंगिकता को निरंतर उद्दीप्त करते हैं। यह उनके कवि की सांवेदिक अनुभूति का एक अनूठा पक्ष ही है, जिसमें वे 'प्रजापति' कविता में आशा करते हैं कि :

बेहद थका और ऊबा हुआ फोरमैन भी जब अपने घर में घुसे
तो बदल जाए तत्काल उसका चेहरा
अपनी पाँच बरस की बेटी के पिता की तरह

राजेश जोशी मूलतः मानवीय संवेगों की सहज अभिव्यक्ति के कवि हैं, उनके काव्य–कौशल में यह भावनात्मक संवेग कोई आश्रय लेते या ओट में छिपते हुए नहीं दिखाई देते, ऐसा कोई प्रयास उनकी कविता में नहीं है। उनकी कुछ अलग–अलग कविताएँ घृणा जैसे भाव के बारे में है। यह समय जिसमें निरंतर 'प्रेम' की जगह 'घृणा' की केन्द्रीयता बढ़ती जा रही है, अपनी संश्लिष्टता में मानवीय स्वभाव के विघटित होते रूप को व्याख्यायित करता है। राजेश जोशी समय और समाज में बढ़ती हुई घृणा की पहचान कर उसके मूलों को प्रश्नांकित करते हैं, यहाँ कोशिश है कि शायद वे अपनी भाषा के माध्यम से घृणा की जगह प्रेम का नैतिक बोध स्थापित कर सकें। उनकी कुछ बेहद चर्चित कविताओं में यह तत्त्व उपस्थित है, 'कर्बला', 'घृणा के बारे में कुछ शब्द', 'नफ़रत करो' और इस जैसी कई कविताएँ उनके खाते में हैं। 'कर्बला' कविता की पंक्ति 'पानी पियो तो याद करो प्यास इमाम हुसैन की' बहुधा उद्धरित की जाने वाली पंक्ति है, इस कविता को पढ़ते समय यह लग सकता है कि यह कविता पानी के बारे में है, या प्यास के बारे में है, लेकिन दरअसल इस कविता का मन्तव्य इसकी आख़िरी पक्तियों में है, जब कवि कहता है कि :

पानी पियो तो सोचो
खारा तो नहीं हुआ है तुम्हारी आत्मा का जल
पानी पियो तो सोचो नन्हें असगर अली के बारे में
सोचो कहीं अन्धे तीर में तो नहीं बदल गयी है
तुम्हारी घृणा!

आख़िरी पंक्तियों में स्पष्ट होता है कि कविता 'घृणा' के बारे में है, कविता के बीच में भी प्रश्न करती हुई एक पंक्ति आती है 'किसी की प्यास के रास्ते में तुम यज़ीद तो नहीं'। पूरी कथा बताने के विस्तार की गुंजाइश यहाँ नहीं, लेकिन कवि उस कथा के माध्यम से हमें बोध कराना चाहता कि सम्प्रदाय, जाति और वर्ग के नाम पर बढ़ती हुई इस घृणा को रोके जाने की आज़ कितनी ज़्यादा ज़रूरत है। राजेश जोशी पूरी ताक़त से घृणा के विपक्ष में प्रेम के पाले में खड़े दिखाई देते हैं। अपनी एक अन्य कविता 'घृणा के बारे में कुछ शब्द' में वे घृणा को प्रश्नांकित करते हुए भी यह बताने से नहीं चूकते कि यूँ तो घृणा कोई बहुत अच्छी चीज़ नहीं है लेकिन अत्याचारी के प्रति घृणा का होना भी आवश्यक है, वहाँ उदासीन हो जाना ज़्यादा बुरा है। अपनी एक दूसरी कविता 'नफ़रत करो' में वे व्यंग्य करते हुए अकारण नहीं कहते कि 'नफ़रत करो/कम्युनिस्टों से करो/इसमें फायदा ही फायदा है।'

एक कवि के रूप में राजेश जोशी का जो रूप सबसे अधिक प्रखर है, वह उनकी राजनैतिक कविताओं में 'विट' का इस्तेमाल है। समकालीन राजनीति की त्रासदियों को पहचानते हुए वे एक अलग तरह का आनंद लेने की हद तक उसके प्रति अपनी भाषा की व्यंजनात्मकता का रचनात्मक प्रयोग करते हैं। अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता में वे पूरी तरह स्पष्ट हैं, यह बात उन्हें उनकी पीढ़ी में एकसाथ उभरे कुछ अन्य चर्चित कवियों से अलग करती है, जो समय के साथ या तो उदार हो गये या पूरी तरह विचलन का शिकार हो गये। साम्प्रदायिकता, जातीय विभेद और वर्ग आधारित शोषण के विरुद्ध उनका पक्ष कभी संदिग्ध नहीं रहा, सत्ता प्रतिष्ठान से उनका मतवैभिन्न्य उनकी कविताओं में ही नहीं उनके जीवन में भी साफ़ दिखाई देता है। इसी संतुलित विवेकदृष्टि का परिणाम है, कि उनकी कविताओं में भी प्रतिरोध का स्वर साफ–साफ अनुगुंजित होता है और उसमें किसी किस्म की मिलावट नहीं है। अपने पहले संग्रह से लेकर अद्यतन कविताओं तक उनकी आवाज़ अन्याय के विरुद्ध उसी तरह बुलंद रही है।

प्रायः एक विधा के रूप में कविता को प्रश्नांकित करने वाले लोगों को इस कविता की ओर ध्यान देना चाहिए, यह कविता अपने समय और सन्दर्भों से आगे जाकर भविष्य के संकटों की पूर्वपहचान का असम्भव यत्न करती प्रतीत होती है। समकालीन सन्दर्भों में यदि देखें, तो कवि की यह उक्ति *'सबसे बड़ा अपराध है इस समय/निहत्थे और निरपराध होना/जो अपराधी नहीं होंगे/मारे जायेंगे'* कितनी सटीक दृष्टिगत होती है। एक बड़ा कवि और उसकी कविता अनिवार्य रूप से यह काम करते हैं, कि आसन्न संकटों की पहचान उनसे सम्भव हो सके। यह कविता केवल एक पॉलिटिकल मुहावरा भर नहीं रचती बल्कि हमारा एक गम्भीर यथार्थ से प्रत्यक्षीकरण कराती है। इसी तरह मेरठ दंगों के बाद लिखी गयी उनकी कविता 'मेरठ 87' में कवि प्रश्न पूछता है कि *'मेरठ से कब बाहर निकलेगी यह रेलगाड़ी',* तो जो साम्प्रदायिक तनाव पहले कुछ जगहों पर हुआ करता था, वह अब पूरे देश में मौजूद है, यह प्रश्न अभी भी मौजूँ है कि इस यथास्थिति से देश कब बाहर निकलेगा।

अद्यतन उपलब्ध संग्रहों और कविताओं से गुजरते हुए हम यह जान पाते हैं कि राजेश जोशी के कविता लोक में गृहस्थी, प्रेम, रोजमर्रा के जीवन और सम्बन्धों पर लिखी गयी तमाम कविताएँ भी हैं, जो अपने कलेवर और बयान में बेहद कोमल हैं। उनकी भाषा अपने विशिष्ट तेवर के बावजूद अत्यंत साधारण शब्दों से बुनी हुई है, वह सड़क पर चल रहे आम आदमी की भाषा है। भारतीय शास्त्र एवं परम्परा से परिचित और बहुपठ होने के बावजूद राजेश जोशी अपनी भाषा में बेवजह की तत्समता से न केवल बचते हैं बल्कि उनकी भाषा का मिजाज़ ख़ालिस 'हिन्दुस्तानी' का है। यही वजह है कि वे बेहद आमफहम भाषा में अपनी बात को पाठक तक सम्प्रेषित कर पाने में सम्भव हुए हैं। बात को कहने की उनकी शैली इतनी विनम्र है कि तीखी से तीखी बात करते हुए भी उनकी कविता 'लाउड' नहीं होती, वह पोस्टर–कविता नहीं है, बल्कि वह आपकी आत्मा में आहिस्ते से प्रवेश करने वाली कविता है, वहाँ स्थायी रूप से बस जाने वाली कविता है।

सन्दर्भ–सूची :

1. नामवर सिंह : कविता के नये प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1968
2. लक्ष्मीकान्त वर्मा : नये प्रतिमान : पुराने निकष, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1996
3. राजेश जोशी : एक कवि की नोटबुक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
4. अजय तिवारी : समकालीन कविता और कुलीनतावाद, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994
5. राजेश जोशी : दो पंक्तियों के बीच, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
6. राजेश जोशी : चाँद की वर्तनी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
7. बलदेव वंशी : आधुनिक हिन्दी कविता में विचार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
8. राजेश जोशी : नेपथ्य में हँसी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
9. www.kavitasamay.org
10. www.hindisamay.com